International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(5): 13-14

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(5): 13-14
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 04-07-2017
Accepted: 05-08-2017

डा0 रंजु पटियाल
एसोसिएट प्रोफेसर, विभाग–संस्कृत,
वी0 टी0 सी0 डी0 ए0 वी0,
महाविद्यालय बनीखेत

Correspondence
डा0 रंजु पटियाल
एसोसिएट प्रोफेसर, विभाग–संस्कृत,
वी0 टी0 सी0 डी0 ए0 वी0,
महाविद्यालय बनीखेत

श्री मद्भगवद् गीता मे वर्णित मनोयोग का समाजिक शन्ति में योगदान

डा0 रंजु पटियाल

प्रस्तावना

किसी भी समाज की वास्तविक स्थिति का निर्धारण उसमे सम्मिलित व्यक्तियों की मानसिकता पर निर्भर करता है। अत्यधिक भौतिक विकास ने प्राचीन काल के समाज की शन्ति को भंग कर दिया जिसके फलस्वरूप मानव सदैव दुःखी रहता है और अनेक रोगों का शिकार हो रहा है। योग ही एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से समाज में शन्ति स्थापित करके मानव जीवन को हर्षोल्लास युक्त एंव समृद्ध बनाया जा सकता है।

प्रस्तुत लेख का उद्देश्य श्री मद्भगवद्–गीता में वर्णित योग के द्वारा विभिन्न समस्याओं के निदान से समाज को विनाश रूपी अन्धकार युक्त गर्त मे गिरने से बचाना है।

भारतीय समाज मे आदि से 'गीता' की छवि एक धर्मशास्त्र के रूप में रही है और इसीलिए गीता पर हाथ रख कर सत्य बोलने की प्रतिज्ञाएँ दुहराई जाने लगी। गीता लोक में मान्य है, पर लोक में मान्य है। इसलिए गीता के उपदेशों के प्रति सभी का सच्चा समर्पण है। गीता का ज्ञान सार्वभौम है। वह मनुष्य को दिव्य बनाता है। उसका थोडा–सा आचरण भी मनुष्य को उच्च बनाने का दावा करता है।[1]

श्री मद्भगवद गीता के विषय में विद्वानों के विभिन्न दृष्टिकोण है; कोई गीता को धर्मशास्त्र अध्यात्मशास्त्र कर्त्तव्यशास्त्र, कर्मयोगशास्त्र अथवा योगशास्त्र मानता है। गॉधी जी के लिए तो गीता माता ही है।

वस्तुतः श्री मद्भगवद गीता योग (युक्तियों) का विशाल योगशास्त्र है। गीता मे जो ज्ञान बॉटा गया है, वह मनुष्य को सभी दृष्टियों से उच्च बनाता है। क्योंकि 'महायोगेश्वर' कृष्ण की वाणी से निकला अनुपम प्रसाद है।[2]

श्री मद्भगवद्गीता में योग ही योग है। गीता के अट्ठारह अध्यायों में अट्ठारह प्रकार के योगों का वर्णन हुआ है। जिन पर सम्यक् दृष्टि डालना आवश्यक है। यथा– ब्रहमविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन सवादेऽर्जुन विषाद योगोनाम। द्वितीय अध्याय में सांरव्ययोग है। तृतीय अध्याय में कर्मयोग पर कृष्ण–अर्जुन का संवाद चतुर्थ अध्याय में ज्ञान कर्म सन्यास योग/ पॉचवे अध्याय में कर्म, सन्यास योग/ छठे अध्याय में मनोयोग का वर्णन हुआ है/ सातवें अध्याय में ज्ञान–विज्ञान योग/ आठवें में अक्षरब्रह्मयोग पर विचार/ नवे अध्याय में राज विद्या राजगुह्ययोग का उपदेश / दसवें अध्याय में भगवान की विभूतियॉ का वर्णन अर्थात् विभूतियोग/ ग्यारहवे में योगेश्वर ने विराट रूप दिखाकर परमेश्वर के विराट रूप का ऑखों देखा हाल बताया, जिसे विश्वरुप दर्शनं योग कहा गया है। बारहवे अध्याय में भक्तियोग का वर्णन / तेरहवे अध्याय में क्षेत्र, क्षेत्रज्ञ विभाग योग है। चौदहवे अध्याय में सत्व–रज–तमआदि का वर्णन कर गुणत्रय विभाग योग/ पन्द्रहवे अध्याय में पुरूषोतम योग का वर्णन हुआ है। सौलहवे अध्याय में योगश्वर ने असुर प्रवृत्ति और सुर प्रवृत्ति के गुणों का दिग्दर्शन कराकर देवासुर सम्पद् विभाग योग को उपदिष्ट किया है। सत्रहवे अध्याय को श्रद्धात्रय विभाग के नाम से जाना जाता है। अन्तिम अट्ठारहवे अध्याय में मोक्षसन्यास योग का वर्णन हुआ है। इस प्रकार गीता में अट्ठारह योग बताये गए हैं।

समाज की शान्ति के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। योग ही एक ऐसा साधन है जिससे मन एंव इन्द्रियों को वश में किया जा सकता है।

आधुनिक जीवन की भागदौड के समय जहॉ मनुष्य मानसिक रूप से चिन्तित है, भयावह वातावरण में जीवन यापन कर रहा है। दिन भर कार्य के बोझ से मन व्यथित रहता है। चारों ओर कोलाहल भरे वातावरण से घिरा हुआ थका हुआ अनुभव कर रहा है, ऐसे में यह आवश्यक है कि मन की शान्ति के लिए खुले स्थान में योगाभ्यास करें।

हालांकि आज अनेक व्यक्ति आसनों के अभ्यास को ही योग कहने लगे हैं परन्तु हमारी ऋषि परम्परा में समयपूर्वक साधना करते हुए आत्मा का परमात्मा से जोडना योग है।

महर्षि पतंजलि के अनुसार ''योगश्चितवृति निरोधः''

अर्थात् चित्त वृत्तियों का निरोध करना योग है। मन चंचल है एक घड़ी भी शान्त नहीं रहता है। जाग्रत अवस्था मे तो सोचता ही है सुषप्तावस्था में भी सोचता ही रहता है कभी भय कभी शोक कभी हर्ष, कभी विषाद अनेक भाव मन मे घूमते ही रहते है। पचविध वृत्तियॉ प्रमाण, विपर्यय विकल्प, निद्रा एंव स्मृति अभ्यास व वैराग्यादि साधनो से मन में लय हो जाती है, उसे योग कहते है।

सामाजिक शान्ति के लिये मनोयोग का अत्यधिक महत्व है। यदि मन वश मे नही होता मानव के सभी कार्य अस्त व्यस्त हो जाते है, और मनुष्य सफलता के लिए सोच भी नही सकता।[3]

यहॉ गीता के उपदेशक भगवान श्री कृष्ण मन के चंचल तथा अस्थिर होने की बात कही है। मन मनुष्य को अनेक प्रकार के संसारिक विषयों में प्रवृत्त करता है। जो कि समाज मे कलह की स्थिति उत्पन्न करता है। मन को वश में कर पाना वेगवान वायु को वश मे करने से भी कठिन है। वैदिक साहित्य में कहा गया है प्रत्येक व्यक्ति इस भौतिक शरीर रूपी रथ पर आरूढ है और बुद्धि इसकी सारथी है। मन लगाम तथा इन्द्रियॉ घोडे है। इस प्रकार मन तथा इन्द्रियों की संगति से यह आत्मा सुख या दुःख का भोक्ता है।[4] ऐसा चिन्तको का कहना है। मन इतना प्रबल तथा हठी है कि इसे अपनी बुद्धि से भी जीत पाना कठिन हो जाता है। जिस प्रकार कि अच्छी से अच्छी दवा द्वारा कभी–कभी रोग वश में नही हो पाता। ऐसे प्रबल मन को योगाभ्यास द्वारा वश मे किया जा सकता है।

मन एंव इन्द्रियॉ मनुष्य को विभिन्न प्रकार के कुकृत्यों में प्रवृत्त कर देती है जिसके परिणाम स्वरूप समाज में अनेक बुराईयॉ उत्पन्न होती है। मनुष्य मे विषय चिन्तन से काम, क्रोध, मोह उत्पन्न होता है। श्री मद्भगवद् गीता में जिन्हे नरक का द्वार बताया गया है।[5]

क्रोध के वशीभूत होकर मनुष्य समाज मे अराजकता फैलाता है और स्वयम् भी अनेक रोगो का शिकार हो जाता है। क्रोध से मोह उत्पन्न होता है और मोह के कारण ही हमारा समाज हत्या, लूट, बलात्कार, घूसखोरी, भ्रष्टाचार, आंतकवाद, कन्या भ्रूणहत्या आदि कई विकृतियों से त्रस्त हो जाता है। जिससे समाज में निरन्तर अशान्ति का वातावरण बनता जा रहा है। मनुष्य के लिए इन्द्रियों के जो विकार है जैसे काम, क्रोध, मोह उनका त्याग करना अनिवार्य है। [6]

योग पद्धति का उद्देष्य मन को रोकना तथा इन्द्रियों को विषयों के प्रति आसक्ति से हटाना है। योग द्वारा मन को इस प्रकार प्रशिक्षित किया जाय कि वह बद्धजीव को अज्ञान के दलदल से निकाल सके।[7] समाज मे मनुष्य मन तथा इन्द्रियों के द्वारा प्रभावित होता है। जो कि समाज में दुःखों का कारण है।

योग के अन्तर्गत आने वाले अष्टांगयोग का जहॉ तक सम्बन्ध है उसका एक मात्र प्रयोजन मन को वश मे करना है, जिससे मानवीय लक्ष्य प्राप्त करने मे वह मित्र बना रहे। जो अपने मन को वश मे नही कर सकता है वह सतत अपने परम शत्रु के साथ निवास करता है।[8] काम, क्रोध, मोह आदि उस मानव को घेर रखते हैं।

अष्टांग योग के अन्तर्गत आने वाले विभिन्न यम–नियमों तथा आसनों के द्वारा ध्यान मे प्रविष्ट होने के आरम्भिक प्रयास करने चाहिए ऐसे प्रयासों से पूर्ण मानसिक सन्तुलन प्राप्त होता जिससे इन्द्रियॉ वश मे होती हैं। जब मनुष्य पूर्ण ध्यान मे सिद्धहस्त हो जाता है तो विचलित करने वाले समस्त मानसिक कार्य बन्द हो जाते हैं। जो कि समाजिक शान्ति में बाधक है।[9]

जब कोई पुरूष समस्त भौतिक इच्छाओं को त्याग करके न तो इन्द्रियतृप्ति के लिए कार्य करता है न सकाम कर्मो में प्रवृत्त होता है, तो योगरूढ कहलाता है।[10] इससे स्पष्ट होता है कि योग ही एक ऐसा माध्यम है जिससे मनुष्य स्वार्थी संग्रही तथा भोगवादी दृष्टि कोण को त्याग कर समाज मे शान्ति एंव समृद्धि ला सकता है। आधुनिक युग मे जहॉ नैतिक मूल्यों के पतन से समाज में अशान्ति एंव निराशा तीव्र गति से बढ रही है। जिसका प्रभाव निश्चित रुप से मनुष्य के स्वास्थ्य पर भी पड रहा है, उन सभी समस्याओं का योग द्वारा समाधान किया जा सकता है और एक शान्त एंव समृद्ध समाज का निर्माण किया जा सकता है।

संधर्व सूची

1. न हि कल्याणकृत्कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति। गीता–(6–40)
2. स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्। गीता–(2–40)
3. एवमुक्त्वा ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः
   दर्शयामास पार्थाय परमं रुपमैश्वरम्। गीता–(11–9)
4. चंचल हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवदृढम्।
   तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव–सुदुष्करम्। गीता–(6–34)
5. ''आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव च
   बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेवच।
   इन्द्रियाणि हयानादुर्विषयांस्तेषु गोचरान्
   आत्मेन्द्रियमनोयुक्त भोक्तोत्यादुर्मनीषिणः।। कठोपनिषद् –(1.3,34)
6. त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः। गीता–(16/21)
7. अहंकारं बलं दर्प काम क्रोधं परिग्रहम्,
   विमुच्य निर्मम शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते। गीता–(18/53)
8. ''बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः
   अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्।'' गीता–(6–6)
9. ''आ रूरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते।
   योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते।।'' गीता–(6–3)
10. यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्ते।
    सर्वसंकल्पसन्यासी योगरुढस्तदोच्यते। गीता–(6–4)